उत्तराखण्ड राज्य एवं अन्य

- विरूद्ध –

श्रीमति सुरेशवती

(सिविल अपील संख्या 142/2021)

[एल.नागेश्वर राव, नवीन सिन्हा, इन्दू मल्होत्रा,न्यायाधीशगण .]

श्रम कानून

औधोगिक विवाद अधिनियम, 1947- धारा 25-बी-परिवाद, सेवा से अवैध छटनी का आरोप-शिकायतकर्ता को प्रारंभ में एक निजी स्कूल में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया और उसके द्वारा लगभग 11 महीने की अवधि (जुलाई 1993 से दिनांक 21.05.1994) तक इसी पद पर काम किया गया-तत्पश्चात्, क्लर्क के रूप में काम किया गया (दिनांक 01.07.1994 से दिनांक 01.07.1997 तक यानी जब उन्होंने सेवा छोड़ दी, तब तक)-वर्ष 2005 में स्कूल को अनुदान सहायता प्राप्त होने लगी और इस कारण स्कूल, उत्तरांचल स्कूल शिक्षा अधिनियम, 2006 से नियंत्रित किया गया-लगभग 09 साल बाद यानी दिनांक 15.07.2006 को, स्कूल के समक्ष, अपनी सेवा में दिनांक 08.03.2006 को हुयी कटौती का आरोप लगाते हुए, शिकायत दर्ज की-स्कूल इंस्पेक्टर ने अपनी रिपोर्ट में जांच के पश्चात कहा कि शिकायतकर्ता ने जुलाई 1997 से स्कूल में काम नहीं किया था तथा न ही कोई अभिलेख पर छुट्टी का आवेदन पेश किया गया था-श्रम न्यायालय के समक्ष शिकायत में, शिकायतकर्ता के विरूद्ध अवॉर्ड पारित किया गया था-अवॉर्ड के खिलाफ याचिका एकमात्र इस आधार पर अनुमति दी गयी थी कि सेवा की परित्याग्यता के संबंध में कोई भी अनुशासनात्मक कार्यवाही अग्रेषित नहीं की गयी थी-उच्चतम न्यायालय में अपील पेश की गयी-आयोजित किया गया कि यह साबित करने का भार, कि शिकायत कर्ता ने कथित बर्खास्ती से पहले पिछले 12 महीनों में 240 दिनों तक काम किया था, शिकायतकर्ता पर था, जो वह प्रमाणित करने में असफल रही- स्कूल ने विधिवत् स्थापित किया कि उसने वर्ष 1997 में अपनी सेवा छोड़ दी थी।

अपील की अनुमति देते हुए, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि:-

1- जहां कोई नियुक्तिकर्ता, किसी कर्मचारी को बर्खास्त करने से पूर्व जांच करने में विफल रहता है, तब वह इस संबंध में स्वतंत्र है कि वह श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत कर अपने कृत्य को उचित ठहराए। फिर पूरा मामला माननीय अधिकरण के क्षेत्राधिकार का होगा कि वह उभयपक्ष द्वारा प्रस्तुत इस संबंध में साक्ष्य, कि सेवा से बर्खास्ती या निर्वहन उचित था या नहीं, से स्वयं को संतुष्ट करे।

मोतीपुर शुगर फैक्टी प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के कर्मचारी बनाम् मोतीपुर शुगर फैक्टी ए.आई.आर. ***1965*** एस.सी. ***1803 : [1965] 3*** एस.सी.आर. ***588,*** दिल्ली क्लॉथ एण्ड

जनरल मिल्स कंपनी बनाम् लुध बुद्ध सिंह *(1972) 1* एस.सी.सी. *595 : [1972] 3* एस.सी. आर. *29,* फायरस्टोन टायर एण्ड रबर कंपनी ऑफ इंडिया *(*पी*)* लिमिटेड बनाम् फायरस्टोन टायर एण्ड रबर कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य *(1973) 1* एस.सी.सी. *813 : [1973] 3* एस.सी. आर. *587*- पर निर्भर

2. श्रम न्यायालय द्वारा पारित अवॉर्ड के अवलोकन पश्चात् यह स्पष्ट है कि उभयपक्षों को अपना मामला प्रमाणित करने हेतु साक्ष्य, मौखिक एवं दस्तावेजी, प्रस्तुत करने का पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा उक्त साक्ष्य पर ध्यान नहीं दिया गया एवं उनके द्वारा मात्र इस आधार पर याचिका को खारिज कर दिया कि विद्यालय द्वारा प्रतिवादी को निष्कासित करने से पूर्व उसके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही नहीं की गयी है। विद्यायल द्वारा श्रम न्यायालय के समक्ष इस संबंध में पर्याप्त साक्ष्य पेश किया गया था कि प्रतिवादी द्वारा अपनी सेवा का परित्याग दिनांक **01.07.1997** को, जब उसकी शादी हुई थी एवं वह अन्य जिले में चली गई थी, कर दिया गया था, जो उसके द्वारा अपने साक्ष्य में अस्वीकार भी नहीं किया गया है। स्कूल के अभिलेख से यह पता चलता है कि वह जुलाई **1997** से स्कूल में नौकरी नहीं कर रही थी।

3. प्रतिवादी की शिक्षक के रूप में प्रारंभिक नियुक्ति जुलाई **1993** से दिनांक **21.05.1994** तक अपने आप में अमान्य थी, क्योंकि वह केवल मध्यवर्ती थी **(**जैसा कि जिला बैसिक शिक्षा अधिकारी, हरिद्वार द्वारा जारी पत्र दिनांक **25.03.1996** से परिलक्षित होता है**),** और उनके पास बी.एड. की डिग्री नहीं थी, जो एक शिक्षक के रूप में नियुक्ति हेतु एक न्यूनतम योग्यता है।

4. प्रतिवादी यह प्रमाणित करने में असफल रही है कि उसने कथित बर्खास्ती **08.03.2006** से पहले के वर्ष में **240** दिनों तक काम किया था। उसके द्वारा श्रम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य के शपथ पत्र में मात्र उक्त संबंध मे प्रकथन किया है। प्रतिवादी के लिए यह खुला विकल्प था कि वह अपने निरंतर सेवायोजन को प्रमाणित करने हेतु स्कूल के यानी उपस्थिति रजिस्टर या अकाउंट रजिस्टर आहूत कराती। चूंकि विद्यालय वर्ष **2005** से उत्तराखण्ड सरकार द्वारा प्रशासित किया जा रहा था, वह दिनांक **08.03.2006** तक अपने निरंतर रोजगार को प्रमाणित करने हेतु सैलरी स्लिप यानी वेतन पर्ची प्रस्तुत कर सकती थी। तथापि वह अपने मामले को प्रमाणित करने के लिए कोई भी साक्ष्य पेश करने में विफल रही है। यह प्रमाणित करने का भार पूर्ण रूप से कर्मचारी पर था कि उसने **08.03.2006** पर अपनी सेवा की कथित समाप्ति की तारीख से पहले के **12** महीनों में से **240** दिनों तक लगातार काम किया है, जिसे उन्मोचित करने में वह असफल रही है। अतः यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विद्यालय ने यह स्थापित किया है कि प्रतिवादी ने वर्ष **1997** में अपनी सेवा छोड़ दी थी एवं तत्पश्चात् वह कभी भी काम पर वापस नहीं आई

भावनगर म्युंसिपल कॉर्पोरेशन विरूद्ध जड़ेजा गोवुभा छनुभा **(2014) 16** एस.सी.सी.**130 : [2014]14** एस.सी.आर. **879**-निर्भर किया गया।

इस संबंध में न्यायदृष्टांत

[1965] 3 एस.सी.आर. 588	**निर्भर**	**पैरा 14**
[1972] 3 एस.सी.आर. 29	**निर्भर**	**पैरा 14**
[1973] 3 एस.सी.आर. 587	**निर्भर**	**पैरा 14**
[2014] 14 एस.सी.आर. 879	**निर्भर**	**पैरा 18**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारिता: सिविल अपील नंबर 142/2021

उच्च न्यायालय उत्तराखण्ड के निर्णय और आदेश दिनांक

28.08.2019 से वर्ष 2016 की याचिका संख्या 3439 (एम/एस.)

डॉक्टर राजीव नन्दा, पंकज मिगलानी, धवल मल्होत्रा, एम.एस. असर एण्ड कंपनी, पक्षकारों की ओर से उपस्थित।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा घोषित किया गया,

इंदू मल्होत्रा, न्यायाधीश, अनुमति दी ।

1. उत्तराखण्ड राज्य ने यह स्पेशल लीव याचिका, उच्च न्यायालय उत्तराखण्ड द्वारा 2016 की याचिका क्रमांक 3439 (एम.एस.) में घोषित निर्णय दिनांक 28.08.2019 को चुनौती देने हेतु पेश की है, जिसमें उच्च न्यायालय द्वारा श्रम न्यायालय के द्वारा पारित अवॉर्ड को विपरीत कर प्रतिवादी को वापस सेवा में बहाल करने हेतु निर्देशित किया है।

2. वर्तमान मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रतिवादी को शुरू में जुलाई 1993 से दिनांक 21.05.1994 की अवधि तक जय भारत ज्यूनियर हाई स्कूल, हरिद्वार (जिसे आगे के पदों में स्कूल से संदर्भित किया जाएगा) में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। इसके बाद, उन्होंने दिनांक 01.07.1994 से क्लर्क के रूप में काम किया। इसके पश्चात् दिनांक 25.03.1996 को जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी द्वारा स्कूल में शिक्षकों, क्लर्क और चपरासी की नियुक्ति को मंजूरी दी गयी, जिसमें प्रतिवादी भी शामिल है एवं जो दिनांक 01.07.1994 से प्रभावशील है। इस अवधि के दौरान स्कूल एक गैर सहायता प्राप्त निजी संस्थान था।

3. दिनांक 24 मई 2005 से स्कूल को सहायता अनुदान प्राप्त होना प्रारंभ हो गया एवं वह उत्तरांचल विद्यालय शिक्षा अधिनियम, 2006 से अनुशासित होने लगा।

4. अपीलार्थी का यह मामला है कि प्रतिवादी ने अपनी शादी के बाद से ही क्लर्क के रूप में अपनी सेवा दिनांक 01.07.1997 से छोड़ दी थी एवं वह देहरादून स्थानांतरित हो गयी थी।

5. लगभग 09 साल पश्चात् यानी दिनांक 15.07.2006 को प्रतिवादी द्वारा स्कूल के समक्ष यह शिकायत दर्ज की गयी कि उसके द्वारा दिनांक 07.03.2006 तक निरंतर काम किया गया है। उसके द्वारा यह भी आरोप लगाया गया कि दिनांक 08 मार्च 2006 को उसे कोई सुनवाई या छंटनी मुआवजे के भुगतान के बिना अवैध रूप से हटा दिया गया।

6. स्कूल ने पत्र दिनांक 21.08.2006 के माध्यम से अतिरिक्त जिला शिक्षा अधिकारी (बेसिक), हरिद्वार से प्रतिवादी द्वारा की गयी शिकायत की जांच करने का अनुरोध किया।

बेसिक स्कूल इंस्पेक्टर ने दिनांक 24 अगस्त 2006 को अपनी विस्तृत रिपोर्ट में कहा कि उनके द्वारा दोनों पक्षों की उपस्थिति में स्कूल के अभिलेखों का निरीक्षण किया गया है। उन्होंने पाया कि प्रतिवादी ने दो अलग-अलग तिथियों का उल्लेख करके नियुक्ति की तारीख में छेड़छाड़ और हेरफेर किया है। जांच से यह भी पता चला कि प्रतिवादी की नियुक्ति अवैध थी क्योंकि परिवादी के पिता प्रबंध समिति के सदस्य थे एवं उसकी माता स्कूल के द्वारा नियुक्त अध्यक्ष थी। अभिलेखों से पता चला कि प्रतिवादी ने स्कूल में जुलाई 1997 के पश्चात् से काम नहीं किया है एवं न ही कोई अवकाश आवेदन उसकी ओर से स्कूल को प्रेषित किया गया है। उनकी निरंतर अनुपस्थिति के कारण स्कूल ने एक अन्य क्लर्क श्रीमति स्नेहलता को उनके स्थान पर दिनांक 17.07.2002 को नियुक्त कर लिया है। प्रतिवादी द्वारा वर्ष 2006 तक अपनी

कथित बर्खास्ती के संदर्भ में कोई भी शिकायत नहीं की गयी है एवं उसके द्वारा उक्त शिकायत तभी की गयी है जब स्कूल, राज्य से अनुदान सहायता प्राप्त करने वाला स्कूल होकर, एक सरकारी स्कूल हो गया है।

7. स्कूल शिक्षा निदेशालय, आंतरिक ऑडिट विभाग, उत्तराखण्ड, देहरादून ने स्कूल की एक ऑडिट रिपोर्ट तैयार की। ऑडिट रिपोर्ट दिनांक 19.02.2008 को अभिलेख पर लिया गया। ऑडिट रिपोर्ट में विद्यालय के छः कर्मचारियों का नाम दर्ज किया गया, जिनमें प्राचार्य, तीन सहायक शिक्षक, श्रीमति स्नेहलता क्लर्क तथा चपरासी श्री रामकुमार सैनी का नाम दर्ज है।

प्रतिवादी का नाम उक्त रिपोर्ट फरवरी 2008 में उल्लेख नहीं है।

8. परिवादी द्वारा श्रम न्यायालय, हरिद्वार के समक्ष शिकायत दर्ज की गयी। शिकायत को अतिरिक्त श्रम आयोग को यह निर्धारित करने के लिए भेजा गया कि क्या कर्मचारी की सेवाओं की कथित समाप्ति उचित या वैध थी। श्रम न्यायालय द्वारा दिनांक 05.02.2010 को कर्मचारी के पक्ष में एकपक्षीय अवॉर्ड पारित किया गया। उक्त अवॉर्ड को 2010 की रिट याचिका संख्या 1853 के माध्यम से उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी। उच्च न्यायालय ने दिनांक 16.09.2015 के आदेश के माध्यम से रिट याचिका की अनुमति दी और मामले को विधि के अनुसार पुनः निराकृत करने हेतु श्रम न्यायालय को रिमांड किया।

9. रिमांड किए जाने पर, श्रम न्यायालय ने उभयपक्षों को विस्तृत साक्ष्य देने की अनुमति दी। दावेदार/प्रतिवादी का मामला यह था कि वह 01.07.1994 से दिनांक 08.03.2006 तक स्कूल में कार्यरत थी, जब उसकी सेवा बिना कोई जांच या बिना व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर दिए, समाप्त कर दी गई। उसने यह तर्क दिया कि उसके द्वारा कथित समाप्ति से पिछले वर्ष कम से कम 240 दिन काम किया गया। चूंकि वह काम स्थायी प्रकृति का था, इसीलिए वह उक्त काम को पुनः स्थापित करने की अधिकारी है। उसने तत्कालीन जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी द्वारा जारी किए गए पत्र दिनांक 25.03.1996 पर भरोसा किया, जिन्होंने स्कूल द्वारा नियुक्त कर्मचारियों को मंजूरी दी थी। इसके अतिरिक्त प्रतिवादी ने खंड शिक्षा अधिकारी, रूड़की द्वारा मुख्य शिक्षा अधिकारी, हरिद्वार को जारी किए गए पत्र दिनांक 20.06.2013 पर भी भरोसा किया, जिसमें प्रतिवादी ने श्रम न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 11.08.2010 के अनुपालन में प्रतिवादी को पुनः नियुक्त करने का अनुरोध था। उक्त पत्र में यह लेख था कि जब सरकार ने सहायता अनुदान के लिए स्कूल को अधिकृत किया था, उस समय प्रतिवादी अवकाश पर थी, जिस कारण प्रतिवादी ने अपना वेतन नहीं लिया था। यह ध्यान योग्य है कि कुमारी स्मिता सैनी को स्कूल द्वारा क्लर्क के पद पर नियुक्ति दी गयी थी। यह कहा गया था कि कुमारी स्मिता सैनी को एक वैकल्पिक पात्र के रूप में माना जाएगा। यह अनुशंसित किया गया था कि प्रतिवादी को श्रम न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 05.02.2010 के अनुपालन में पुनः स्कूल में शामिल होने की अनुमति दी जाए।

प्रतिपरीक्षण में प्रतिवादी ने यह स्वीकार किया है कि जब उसकी स्कूल में नियुक्ति हुयी थी तब उसकी मां स्कूल की अध्यक्ष थी एवं उसके पिता प्रबंध समिति के सदस्य थे। उसने

आगे यह स्वीकार किया है कि स्कूल में सभी कर्मचारियों के लिए उपस्थिति रजिस्टर मात्र एक ही संचित किया जाता है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उसकी शादी मई 1997 में हुई थी और वह विक्रम नगर, देहरादून में अपने ससुराल में रह रही थी।

10. स्कूल ने अपने जवाबदावा में यह अभिवचन किया है कि दावेदार दिनांक 01.07.1997 से निरंतर स्कूल से अनुपस्थित रही है, क्योंकि उसकी शादी हो चुकी थी और वह देहरादून में रह रही थी। यह विशेष रूप से कहा गया था कि वह कभी भी स्कूल में वापस नहीं आयी। उस समय स्कूल को राज्य से सहायता अनुदान नहीं मिल रहा था। यह प्रस्तुत किया जाता है कि दावेदार द्वारा लगाया गया आरोप कि उसकी सेवाएं दिनांक 08.03.2006 को अवैध रूप से समाप्त कर दी गईं, पूरी तरह से गलत और निराधार हैं। आगे यह भी प्रस्तुत किया गया कि स्कूल एक "उद्योग" नहीं है एवं वह औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अंतर्गत नहीं आएगा।

स्कूल द्वारा हैडमास्टर, दो सहायक शिक्षक और स्कूल के चपरासी की साक्ष्य पेश की है। हैडमास्टर ने दावेदार द्वारा लगाए गए आरोपों को पूरी तरह से गलत एवं किसी भी सच्चाई से रहित बताया है। उन्होंने बताया कि दावेदार का यह कथन कि उसकी सेवाएं कथित तौर पर बिना किसी पूर्व सूचना के दिनांक 08.03.2006 को समाप्त कर दी गयी थी, गलत और निराधार थी। यह स्कूल का स्पष्ट मामला है कि दावेदार ने 1997 में अपनी शादी के पश्चात् स्कूल में काम नहीं किया था एवं वह देहरादून स्थानांतरित हो गयी थी। स्कूल ने तब श्रीमति स्नेहलता को दिनांक 17.07.2002 को क्लर्क के पद पर नियुक्त किया था। वर्ष 2005 में स्कूल के सरकार द्वारा सहायता प्राप्त करने वाले स्कूल बनने के बाद ही, उसने वर्ष 2006 में सहायक श्रम आयुक्त, हरिद्वार के समक्ष झूठी शिकायत दर्ज की। दिनांक 24.08.2006 को बेसिक स्कूल इंस्पेक्टर द्वारा की गयी जांच से पता चला कि वह स्कूल के अध्यक्ष एवं प्रबंध समिति के सदस्य की पुत्री है।

राजेन्द्र कुमार, सहायक अध्यापक ने यह साक्ष्य दिया है कि प्रतिवादी का यह आरोप कि वह दिनांक 08.03.2006 तक क्लर्क के पद पर कार्यरत थी, गलत था। जिस समय सहायता अनुदान प्रारंभ किया गया था, उस समय स्कूल द्वारा विद्यालय में कार्यरत सभी कर्मचारी एवं स्टाफ का नाम अनुमोदन हेतु दिनांक 01.07.2005 को उत्तराखण्ड सरकार को भेजा गया था। उक्त सूची में दावेदार का नाम नहीं है एवं मात्र क्लर्क स्नेहलता का नाम है।

स्कूल के चपरासी रामकुमार सैनी ने यह साक्ष्य दिया है कि प्रतिवादी को शुरू में एक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था और बाद में उन्होंने क्लर्क के रूप में काम किया था। उन्होंने बताया कि विद्यालय में जिन शिक्षकों की नियुक्ति की गयी है, उनके लिए बी.एड. एवं शिक्षक प्रशिक्षण की योग्यता होना आवश्यक है।

11. श्रम न्यायालय ने दिनांक 22.08.2016 को अवॉर्ड के माध्यम से दावेदार/प्रतिवादी के विरूद्ध संदर्भ का उत्तर दिया। यह माना गया कि दावेदार यानी प्रतिवादी कोई अनुतोष प्राप्त करने की हकदार नहीं थी क्योंकि दिनांक 01.07.1997 से स्कूल से उसकी निरंतर अनुपस्थिति

को प्रमाणित करने के लिए स्कूल प्रबंधन द्वारा प्रर्याप्त साक्ष्य पेश किए गए थे। प्रतिवादी इस संदर्भ में साक्ष्य पेश करने में असफल रही है कि उसकी सेवा दिनांक 08.03.2006 को समाप्त कर दी गयी है। उक्त सेवा अवैध रूप में समाप्त की गयी है, को प्रमाणित करने का भार प्रतिवादी पर था। आवेदक स्कूल के उपस्थिति रजिस्टर एवं एकाउंट पुस्तिका को तलब करने में भी असफल रही है, जिससे वह प्रमाणित कर सकती थी कि वह निरंतर दिनांक 08.03.2006 तक काम कर रही थी। परिणामस्वरूप वह दिनांक 08.03.2006 तक अपने रोजगार को प्रमाणित करने के दायित्व का निर्वहन करने में विफल रही है। स्कूल का सहायता अनुदान मिलना प्रारंभ होने के पश्चात्, प्रतिवादी द्वारा 09 वर्षों से अधिक समय के बाद वर्तमान आवेदन दाखिल किया गया है। दावेदार का यह तर्क कि उसकी नियुक्ति दिनांक 08.03.2006 को अवैध रूप से समाप्त कर दी गयी थी, अविश्वसनीय है एवं किसी भी सच्चाई से रहित है। यह माना गया कि दावेदार द्वारा महत्वपूर्ण तथ्य को छुपाया गया है एवं वह स्वच्छ हाथों से न्यायालय में नही आई है।

12. श्रम न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर प्रतिवादी ने रिट याचिका डब्ल्यू.पी. नंबर 3439/2016, उच्च न्यायालय में पेश की। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को केवल इस आधार पर अनुमति दी कि स्कूल द्वारा अपने प्रतिपरीक्षण में यह स्वीकार किया गया है कि उनके द्वारा प्रतिवादी के स्कूल का परित्याग करने के पश्चात्, उसके विरूद्ध कोई भी जांच या अनुशासनात्मक कार्यवाही नहीं की गयी है। यद्यपि स्कूल द्वारा जवाबदावा में यह अभिवचन किया गया है कि कर्मचारी द्वारा वर्ष 1997 में अपनी नौकरी का परित्याग कर दिया गया था किंतु इसके विपरीत ऐसा कोई अभिवचन नहीं था कि दिनांक 08.03.2006 को प्रतिवादी द्वारा अपनी सेवा का परित्याग किया गया हो।

13. हमने उभय पक्षों के विद्वान वकील को सुना है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है। हमने यह पाया कि उच्च न्यायालय ने श्रम न्यायालय द्वारा पारित अवॉर्ड दिनांक 22.08.2016 को मात्र इस आधार पर रद्द कर दिया है कि स्कूल द्वारा उसके कथित परित्याग के संबंध में कोई अनुशासनात्मक जांच नहीं की गयी है।

14. इस न्यायालय ने अपने निर्णय की श्रृंखला में यह अभिनिर्धारित किया है कि जहां कोई नियुक्तिकर्ता, किसी कर्मचारी को बर्खास्त करने से पूर्व जांच करने में विफल रहता है, तब वह इस संबंध में स्वतंत्र है कि वह श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत कर अपने कृत्य को उचित ठहराए। फिर पूरा मामला माननीय अधिकरण के क्षेत्राधिकार का होगा कि वह उभयपक्ष द्वारा प्रस्तुत इस संबंध में साक्ष्य, कि सेवा से बर्खास्ती या निर्वहन उचित था या नहीं, से स्वयं को संतुष्ट करे।

मोतीपुर शुगर फैक्ट्री प्राईवेट लिमिटेड के श्रमिक बनाम् मोतीपुर शुगर फैक्ट्री मामले में चार न्यायाधीशों की पीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

"11. इस न्यायालय के कई निर्णयों से अब यह स्पष्ट रूप से तय हो गया है कि जहां नियोक्ता किसी कर्मचारी को बर्खास्त करने से पहले जांच करने में विफल रहा है तो उसके

द्वारा ट्रिब्यूनल के समक्ष सभी प्रासंगिक साक्ष्य पेश कर अपनी कार्यवाही को उचित ठहराया जा सकता है। ऐसे मामलों में नियोक्ता को वह लाभ नहीं मिलेगा जो उसे घरेलू पूछताछ के मामले में मिलता था। पूरा मामला ट्रिब्यूनल के समक्ष खुला होगा, जिनके पास न केवल सीमित प्रश्नों को पूछने का अधिकार होगा (देखें *इंडियन आयरन एण्ड स्टील कंपनी बनाम् वर्कमैन*) अपितु वह उक्त समस्त प्रश्न पूछ सकता है एवं नियोक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों का अवलोकन कर सकता है, जिससे उसे यह संतुष्टि हो जाए कि क्या बर्खास्तगी या सेवा मुक्ति उचित थी या नहीं। इस संदर्भ में *सनामूसा शुगर वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम् सोब्रती खांन, फुलबरी टीएस्टेट बनाम् वर्कमैन एवं पंजाब नेशनल बैंक लिमिटेड बनाम वर्कमैन* अवलोकनीय है। उक्त तीनों न्यायदृष्टांत में इस न्यायालय द्वारा *भारत शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम् जयसिंह* भी विचार में लिए गए एवं श्रम अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय *रामस्वार्थ सिन्हा बनाम् बेलसुंद शुगर कंपनी* का भी संदर्भ लिया गया। यह इंगित किया गया कि "जांच आयोजित करने में चूक का महत्वपूर्ण प्रभाव केवल यह था कि ट्रिब्यूनल को केवल इस बात पर विचार नहीं करना होगा कि क्या कोई प्रथमदृष्ट्या मामला था अपितु उसे सबूतों के आधार पर स्वयं यह निर्धारित करना होगा कि क्या वास्तव में जो आरोप लगाए गए हैं, वह सही हैं।" यह सही है कि *फुलबरी टी एस्टेट* मामले को छोड़कर, तीनों मामले औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 23 के तहत आवेदन पर थे किंतु जहां मामला धारा 33 के तहत अनुमोदन हेतु प्रस्तुत होता है या औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 के संदर्भ में प्रस्तुत होता है, वहां सिद्धांत में कोई अंतर दिखाई नहीं देता है। किसी भी मामले में यदि जांच दोषपूर्ण है या यदि स्थाई आदेशों के अनुसार कोई जांच नहीं की गई है, तो मामला ट्रिब्यूनल के समक्ष खुला होगा और नियोक्ता को तथ्यों के साथ-साथ बर्खास्ती या सेवा मुक्ति के अपने आदेशों को भी उचित ठहराना होगा। *फुलबरी टी एस्टेट* मामला धारा 10 के संदर्भ में था एवं वहां पर भी यही सिद्धांत लागू किया गया था एवं एकमात्र अंतर यह था कि उस मामले में जो जांच हुयी थी, वह दोषपूर्ण थी। हमारी राय में एक दोषपूर्ण जांच, जांच न होने के समान है एवं दोनों ही मामलों में ट्रिब्यूनल के पास तथ्यों पर जाने का अधिकार क्षेत्र होगा और नियोक्ता को ट्रिब्यूनल को संतुष्ट करना होगा कि तथ्यों के आधार पर बर्खास्तगी या सेवा मुक्ति का आदेश उचित था।"

इसके पश्चात ***दिल्ली क्लॉथ एवं जनरल मिल्स कंपनी एवं लुध बुध सिंह*** में माननीय न्यायालय ने यह माना था कि:

"1. यदि प्रबंधन द्वारा कोई घरेलू जांच नहीं की गयी है या यदि प्रबंधन यह स्पष्ट करता है कि वह अपने द्वारा की गयी किसी भी घरेलू जांच पर भरोसा नहीं करता है, तो वह ट्रिब्यूनल के समक्ष सीधा साक्ष्य पेश करने का हकदार है एवं ट्रिब्यूनल उसके द्वारा पेश किए गए साक्ष्य को गुण-दोष के आधार पर विचार कर, उस पर निर्णय देने के लिए बाध्य है। ऐसे मामले में ट्रिब्यूनल के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह घरेलू जांच की वैधता पर विचार करे, चूंकि स्वयं नियोक्ता द्वारा उक्त घरेलू जांच पर भरोसा नहीं किया गया है।

3. जहां प्रबंधन अपने द्वारा की गयी जांच पर भरोसा करता है और साथ ही ट्रिब्यूनल के समक्ष साक्ष्य भी पेश करता है ऐसी स्थिति में ट्रिब्यूनल का यह कर्तव्य है कि सर्वप्रथम वह इस संबंध में विचार करे कि क्या प्रबंध द्वारा की गयी जांच या कार्यवाही वैध और उचित है। यदि ट्रिब्यूनल इस बात से संतुष्ट है कि जांच की कार्यवाही ठीक एवं वैध रूप से हुयी है तो उसके समक्ष पेश किए गए साक्ष्य पर गुण-दोष के आधार पर विचार करने का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। यह कि जब ट्रिब्यूनल यह पाता है कि जांच कार्यवाही सही एवं वैध रूप से नहीं हुयी है तभी उसे इस संबंध में क्षेत्राधिकार प्राप्त होता है कि वह मामले का गुण-दोष पर निराकरण करे एवं ऐसे मामलों में उसके द्वारा प्रबंधन द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करना होगा एवं उक्त साक्ष्य को ही अपने निर्णय का आधार बनाना होगा।"

इसके अतिरिक्त इस न्यायालय के न्यायदृष्टांत ***वर्कमैन ऑफ फायरस्टोन टायर एण्ड रबर कंपनी ऑफ इंडिया (पी) लिमिटेड बनाम् द मैनेजमेंट और फायरस्टोन टायर एण्ड रबर कंपनी ऑफ इंडिया (पी) लिमिटेड और अन्य*** मामले पर भी भरोसा किया गया है, जिसमें जांच आयोजित करने के संबंध में व्यापक सिद्धांत इस प्रकार बताए गए थे :

" 32. उक्त निर्णयों से, मुख्य रूप में निम्नलिखित सिद्धांत समक्ष आते हैं:

"1. अनुशासनात्मक कार्यवाही करने और सजा की मात्रा तय करने का अधिकार मुख्य रूप से प्रबंधकीय कार्य है परंतु यदि कोई विवाद ट्रिब्यूनल को भेजा जाता है तो ट्रिब्यूनल के पास यह देखने की शक्ति है कि नियोक्ता की कार्यवाही उचित है या नहीं।

2. सजा देने से पहले, एक नियोक्ता से अपेक्षा की जाती है कि वह स्थायी आदेशों के प्रावधान के अनुरूप उचित जांच करे एवं यदि प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत भी लागू होता हो, तो उसका भी ध्यान रखे। जांच मात्र औपचारिकता नहीं रहनी चाहिए।

3. जब किसी नियोक्ता द्वारा उचित जांच की गयी हो और कदाचार का निष्कर्ष उक्त जांच में दिए गए साक्ष्य से निकला एक प्रशंसनीय निष्कर्ष हो, तो ट्रिब्यूनल के पास अपीलीय निकाय जैसे नियोक्ता के निर्णय पर फैसला सुनाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। नियोक्ता के निर्णय में हस्तक्षेप किया जाना तभी उचित होगा जब जांच में निकले निष्कर्ष विकृत हों या प्रबंधन द्वारा उत्पीड़न किया जाना दर्शित करते हों या अनुचित श्रम व्यवहार या दुर्भावनापूर्ण तरीके से दोषी हों।

4. यदि किसी नियोक्ता द्वारा जांच नहीं की गयी हो या उसके द्वारा की गयी जांच दोषपूर्ण पाई गयी हो, ट्रिब्यूनल को आदेश की वैधता के संदर्भ में खुद को संतुष्ट करने हेतु, नियोक्ता एवं कर्मचारी को एक अवसर, साक्ष्य प्रस्तुत करने हेतु देना होगा। नियोक्ता अपनी कार्यवाही को उचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करने लिए स्वतंत्र है एवं कर्मचारी भी इसके विपरीत साक्ष्य पेश करने हेतु स्वतंत्र है।

5. किसी नियोक्ता द्वारा जांच न करने का प्रभाव यह होता है कि ट्रिब्यूनल को मात्र यह नहीं देखना होगा कि क्या प्रथमदृष्ट्या मामला है या नहीं। वहीं दूसरी ओर जहां बर्खास्तगी या सेवा मुक्ति करने का विवादित आदेश ट्रिब्यूनल के समक्ष है तो ट्रिब्यूनल को उसके समक्ष पेश किए

गए साक्ष्य के आधार पर स्वयं यह निर्णय लेना होगा कि कथित कदाचार प्रमाणित हुआ है या नहीं। दोषपूर्ण जांच का मामला किसी भी जांच के समान नहीं है।

6. ट्रिब्यूनल को उसके समक्ष रखे गए साक्ष्य, प्रबंधीय कार्यवाही के संबंध में, पर विचार करने का सर्वप्रथम अधिकार तब प्राप्त होता है जब या तो कोई जांच नहीं की गयी है या नियोक्ता द्वारा की गयी जांच दोषपूर्ण है।

7. इस बात को कभी भी मान्यता नहीं दी गयी है कि यदि ट्रिब्यूनल द्वारा यह पाया जाता है कि कोई घरेलू जांच नहीं हुयी है या कर्मचारी की बर्खास्तगी के संबंध में जांच दोषपूर्ण है, तो वह सीधे बिना किसी अन्य कार्यवाही के बर्खास्त हुए कर्मचारी की पुनः नियुक्ति हेतु आदेश करे।

8. एक नियोक्ता, जो अपनी कार्यवाही को सही ठहराने के लिए ट्रिब्यूनल के समक्ष प्रथम बार साक्ष्य पेश करने के अवसर का लाभ उठाना चाहता है, उसे उचित चरण में उक्त साक्ष्य पेश करने हेतु न्यायालय से अनुमति लेनी चाहिए। यदि उसके द्वारा ऐसा अवसर मांगा जाता है, तो ट्रिब्यूनल के पास इंकार करने की कोई शक्ति नहीं है। किसी नियोक्ता को ट्रिब्यूनल के समक्ष पहली बार साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देना, प्रबंधन और कर्मचारी दोनों के हित में है एवं उक्त कृत्य ट्रिब्यूनल को कथित कदाचार के बारे में संतुष्ट होने में सक्षम बनाता है।

9. एक बार जब नियोक्ता द्वारा की गयी जांच या ट्रिब्यूनल के समक्ष सर्वप्रथम रखे गए साक्ष्य से यह प्रमाणित हो जाता है कि कर्मचारी द्वारा कदाचार किया गया है तब नियोक्ता द्वारा दिए गए दण्ड में ट्रिब्यूनल द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है एवं एकमात्र अपवाद यह है कि जिन मामलों में सजा इतनी कठोर हो कि वह अत्याचार की ओर इंगित करती हो, तब ट्रिब्यूनल उक्त सजा में हस्तक्षेप कर सकता है।

10. किसी भी मामले में, बर्खास्तगी के आदेश को रद्द करने के बाद, क्या एक श्रमिक को बहाल किया जाना चाहिए या मुआवजा दिया जाना चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय ने *पैनीटोल टी एस्टेट बनाम् वर्कमैन* में तय किया था एवं जो श्रम न्यायालय या ट्रिब्यूनल के न्यायिक निर्णय के भीतर भी है।

40. अतः यह देखा जाएगा कि उन मामलों के संबंध में, जहां घरेलू जांच की गयी हो और उन मामलों में भी जहां ट्रिब्यूनल पहली बार उसके सामने पेश किए गए साक्ष्य पर मामले का विचार करता है, धारा 11ए के तहत संतुष्टि, संबंधित कर्मचारी के अपराध या अन्यथा के संबंध में निर्णय ट्रिब्यूनल का है। ट्रिब्यूनल को साक्ष्य पर विचार करना होगा और किसी न किसी तरीके से निष्कर्ष पर पहुंचना होगा। जहां किसी मामले में किसी नियोक्ता द्वारा जांच की गयी है और कदाचार का निष्कर्ष निकलता है, ट्रिब्यूनल तब, उचित मामलों में, उस निष्कर्ष से भिन्न अपना निष्कर्ष दे सकता है और यह मान सकता है कि कोई कदाचार साबित नहीं हुआ है।

41. हम नियोक्ता द्वारा दिए गए तर्क को स्वीकार करने के लिए इच्छुक नहीं हैं कि ट्रिब्यूनल द्वारा धारा 11ए के तहत हस्तक्षेप का चरण केवल तब आएगा जब उसे नियोक्ता द्वारा दर्ज किए गए अपराध के निष्कर्ष को स्वीकार करने के पश्चात्, सजा पर विचार करना होता है। यह

ध्यान योग्य है कि ट्रिब्यूनल यह मान सकता है कि सजा उचित नहीं है क्योंकि कथित कदाचार इस प्रकृति का नहीं पाया गया है कि उसकी सजा, बर्खास्तगी या सेवा मुक्ति होनी चाहिए। ट्रिब्यूनल यह भी मान सकता है कि सेवा मुक्ति या बर्खास्तगी का आदेश उचित नहीं है क्योंकि कथित कदाचार स्वयं साक्ष्य द्वारा स्थापित नहीं होता है। किसी भी तरह से निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, ट्रिब्यूनल को स्वयं के लिए साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करना होगा। अंततः ट्रिब्यूनल द्वारा यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि कदाचार या तो प्रमाणित नहीं हुआ है या कदाचार इस प्रकार का है कि उसकी सजा सेवा मुक्ति या बर्खास्तगी नहीं होनी चाहिए। इसीलिए, हमारे अनुसार, धारा 11ए अब ट्रिब्यूनल को उक्त दोनों बिंदुओं पर साक्ष्य के आधार पर संतुष्ट होने की पूर्ण शक्ति प्रदान करता है। साक्ष्य का विश्लेषण करने और अपराध या अन्यथा के बारे में स्वयं निष्कर्ष पर पहुंचने की शक्ति, हमेशा से ट्रिब्यूनल के पास थी, जब वह पहली बार उसके समक्ष पेश किए साक्ष्य के आधार पर किसी विवाद का फैसला कर रहा था किंतु अब उक्त दोनों श्रेणियों को धारा 11ए के द्वारा एकसमान कर दिया गया है।"

15. हमने श्रम न्यायालय द्वारा पारित फैसले का अध्ययन किया है और यह पाया है कि पक्षों को अपने संबंधित मामले को प्रमाणित करने हेतु, मौखिक और दस्तावेजी, दोनों तरह की साक्ष्य पेश करने का संपूर्ण अवसर प्रदान किया गया था। उच्च न्यायालय ने उक्त साक्ष्य पर ध्यान भी नहीं दिया है और रिट याचिका का निपटारा मात्र इस आधार पर कर दिया है कि स्कूल ने प्रतिवादी को सेवा से बर्खास्त करने से पूर्व कोई अनुशासनात्मक जांच नहीं की है। स्कूल ने यह प्रमाणित करने के लिए कि प्रतिवादी ने दिनांक 01.07.1997 से अपनी सेवा का परित्याग कर दिया गया था एवं उसकी शादी हो गयी थी एवं वह दूसरे जिले में चली गयी थी, के संबंध में श्रम न्यायालय के समक्ष पर्याप्त साक्ष्य पेश किया है, जिसे उसके द्वारा अपने साक्ष्य में अस्वीकार भी नहीं किया गया है। स्कूल के रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि वह जुलाई 1997 से स्कूल में कार्यरत नहीं थी।

16. प्रतिवादी की शिक्षक के रूप में प्रारंभिक नियुक्ति जुलाई 1993 से दिनांक 21.05.1994 तक स्वयं ही अमान्य थी क्योंकि वह केवल इंटरमीडिएट थी (जैसा कि जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी, हरिद्वार द्वारा जारी पत्र दिनांक 25.03.1996 में दर्शाया गया है) और उसके पास बी.एड. की डिग्री भी नहीं थी, जो किसी शिक्षक की नियुक्ति हेतु, एक न्यूनतम योग्यता है।

17. प्रतिवादी यह प्रमाणित करने मे विफल रही है कि उसने दिनांक 08.03.2006 को अपनी कथित सेवा समाप्ति से पहले वर्ष के दौरान 240 दिनों तक काम किया था। उसके द्वारा श्रम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत शपथ पत्र पर मात्र अभिवचन किए गए हैं। प्रतिवादी के लिए यह खुला था कि वह दिनांक 08.03.2006 तक अपने निरंतर रोजगार को प्रमाणित करने के लिए स्कूल के रिकॉर्ड यानी उपस्थिति रजिस्टर और खातों की मांग कर सकती थी। चूंकि स्कूल का संचालन वर्ष 2005 से उत्तराखण्ड सरकार द्वारा किया जा रहा है, तो वह अपने निरंतर रोजगार को प्रमाणित करने हेतु सैलरी स्लिप यानी वेतन पर्ची भी प्रस्तुत कर सकती थी। तथापि वह अपने मामले को प्रमाणित करने हेतु कोई भी साक्ष्य पेश करने में विफल रही

है। प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत खंड विकास अधिकारी, रूड़की के दिनांक 20.06.2013 के पत्र पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। पत्र में यह स्वीकार किया गया है कि जब सरकार द्वारा स्कूल को अधिकृत किया गया और स्कूल को सहायता अनुदान प्राप्त होने लगी, तब प्रतिवादी अवकाश पर थी। श्रम न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 05.02.2010 के अनुपालन में कार्य करने हेतु, खंड विकास अधिकारी द्वारा मुख्य शिक्षा अधिकारी, हरिद्वार को की गयी सिफारिश पर भरोसा नहीं किया जा सकता है, क्योंकि दिनांक 05.02.2010 के अवॉर्ड को उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया है।

18. श्रम न्यायालय के समक्ष पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर, हम यह मानते हैं कि स्कूल ने यह स्थापित किया है कि प्रतिवादी ने वर्ष 1997 में सेवा छोड़ दी थी और वह कभी भी काम पर वापस नहीं आई थी।

प्रतिवादी यह प्रमाणित करने के भार का निर्वहन करने में विफल रही है कि उसने अपनी सेवा समाप्ति दिनांक 08.03.2006 के पूर्व के 12 महीनों में 240 दिन काम किया था। यह प्रमाणित करने का भार कर्मचारी पर था कि उसने दिनांक 08.03.2006 को कथित समाप्ति से पहले के 12 महीनों में निरंतर 240 दिनों तक काम किया था, जिसे वह उन्मोचित करने में असफल रही है।

इस न्यायालय की खण्डपीठ के न्यायदृष्टांत ***भावनगर म्युंसिपल कॉर्पोरेशन बनाम् जड़ेजा गोभुवा छनुभा*** में यह माना गया था कि:

"7. यह स्थापित है कि छंटनी मुआवजे का भुगतान न करने के कारण किसी कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करने का आदेश को अवैध ठहराए जाने हेतु यह आवश्यक है कि श्रमिक यह स्थापित करे कि वह औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25 बी के प्रावधान अनुसार वह निरंतर सेवा में था। प्रतिवादी को उस प्रयास में सफल होने के लिए यह दिखाना आवश्यक था कि वह 25 बी (2)(ए)(ii) के अनुपालन में 240 दिनों तक निरंतर सेवा में था। उक्त तथ्य को प्रमाणित करने का भार कि उक्त अवधि के लिए नियोक्ता वास्तविक और निरंतर सेवा में था, श्रमिक पर है। इस न्यायालय के निर्णय *रेंज फॉरेस्ट ऑफिसर बनाम् एस.टी. हदीमनी, म्युंसिपल कॅर्पोरेशन फरीदाबाद बनाम् श्रीनिवास, एम.पी. इलैक्ट्रीसिटी बोर्ड बनाम् हरिराम, राजस्थान स्टेट गंगानगर एस.मिल्स लिमिटेड बनाम् राजस्थान राज्य ,: 2004 एस.सी.सी. (एल.एन.एस.) 1055, सुरेन्द्र नगर जिला पंचायत बनाम् जेठाभाई पीतंबर भाई एवं आर.एम. यल्लाठी बनाम् एगजीक्यूटिब इंजीनियर* में भी स्पष्ट रूप से यह सिद्धांत स्वीकार किया गया है कि कर्मचारी ने 240 दिनों तक काम किया है, को प्रमाणित करने का भार कर्मचारी पर है। इसके अतिरिक्त यह प्रश्न कि क्या यदि नियोक्ता द्वारा उसके पास उपलब्ध सर्वोत्तम साक्ष्य पेश नहीं किया जाता है तो क्या उसके विरूद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना संभव है, उक्त विषय इस न्यायालय के न्यायदृष्टांत *म्युंसिपल कॅर्पोरेशनफरीदाबाद बनाम् श्रीनिवास एवं मध्यप्रदेश बिजली विभाग विरूद्ध हरिराम* का भी मुख्य विवाद्यक रहा है। इस न्यायालय ने यह माना है कि मात्र, चूंकि प्रबंधन द्वारा कोई

दस्तावेज पेश नहीं किए गए हैं तो उसके विरूद्ध कोई भी विपरीत निष्कर्ष निकाला जाना संभव नहीं है।"

19. उपरोक्त विश्लेषण के पश्चात्, हम वर्तमान अपील की अनुमति देते हैं और उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करते हैं। अवॉर्ड दिनांक 22.08.2016 को बहाल किया जाता है।

कॉस्ट के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

लंबित आवेदन, यदि कोई हो तद्नुसार निपटाए जाते हैं। सुश्री स्वाति गोयल